बार्हस्पत्यो भरद्वाजः।अग्निः। गायत्री, १, ६ वर्धमाना, २७, ४७-४८ अनुष्टुप्, ४६ त्रिष्टुप्।

त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः। देवेभिर्मानुषे जने॥ ६.०१६.०१

अग्ने। त्वम्। यज्ञानाम्- यज्ञेषु। होता- देवानामाह्वाता। विश्वेषां हितः- सर्वभूतहितक्रतुः। देवेभिः- देवैः। मानुषे जने- मनुष्येषु स्थापितः ॥१॥

स नो मन्द्राभिरध्वरे जिह्वाभिर्यजा महः। आ देवान्वक्षि यक्षि च॥ ६.०१६.०२

सः- असौ त्वम्। नः- अस्माकम्। अध्वरे- ध्वररहितकर्मणि। मन्द्राभिः- सुखप्रदाभिः। जिह्वाभिः- स्वज्वालाभिः। महः- महतः। देवान्। यज- पूजय। आव क्षि- आवह। यक्षि- तेभ्यो देहि। च ॥२॥

वेत्था हि वेधो अध्वनः पथश्च देवाञ्जसा। अग्ने यज्ञेषु सुक्रतो॥ ६.०१६.०३

वेधः- मेधाविन्। सुक्रतो- सर्वभूतहितक्रतुभूत। अग्ने। देव- द्योतनशील। अञ्जसा- आर्जवेन। अध्वनः पथश्च- सन्मार्गान्। यज्ञेषु। वेत्थ- जानासि। हि- खलु ॥३॥

त्वामीळे अध द्विता भरतो वाजिभिः शुनम्। ईजे यज्ञेषु यज्ञियम्॥ ६.०१६.०४

अध- अथ। त्वाम्। भरतः- निर्वाहकः सन्। द्विता शुनम्- अभ्युदयनिःश्रेयसात्मकं सुखमुद्दिश्य। त्वाम्। वाजिभिः- प्राणतुरगैः। ईळे- स्तौमि। यज्ञेषु। यज्ञियम्- पूज्यम्। ईजे- पूजयामि ॥४॥

त्वमिमा वार्या पुरु दिवोदासाय सुन्वते। भरद्वाजाय दाशुषे॥ ६.०१६.०५

त्वम्। इमा- एतानि। पुरु- बहूनि। वार्या- वरणीयानि। दिवोदासाय- देवसेवकाय। सुन्वते- रसनिष्पादकाय। भरद्वाजाय- हव्यधारकाय। दाशुषे- यच्छते। यच्छसि ॥५॥

त्वं दूतो अमर्त्य आ वहा दैव्यं जनम्। शृण्वन्विप्रस्य सुष्टुतिम्॥ ६.०१६.०६

विप्रस्य- मेधाविनः। सुष्टुतिम्- शोभनस्तुतिम्। शृण्वन्। त्वम्। अमर्त्यः- अमृतः। दूतः सन्। दैव्यं जनम्- देवान्। आ वह ॥६॥

त्वामग्ने स्वाध्यो३ मर्तासो देववीतये। यज्ञेषु देवमीळते॥ ६.०१६.०७

अग्ने। देवम्- द्योतनशीलम्। त्वाम्। देववीतये- दिव्यानुभूतये। यज्ञेषु- दानेषु सङ्गतिकरणेषु पूजासु। स्वाध्यः- शोभनध्यानाः। मर्तासः- मर्त्याः। ईळते- स्तुवन्ति ॥७॥

तव प्र यक्षि संदृशमुत क्रतुं सुदानवः। विश्वे जुषन्त कामिनः॥ ६.०१६.०८

सुदानवः- शोभनदायकस्य। तव- ते। संदृशम्- सम्यक् दर्शनम्। उत- अपि च। क्रतुम्- प्रज्ञाम्। प्र- प्रकर्षेण। यक्षि- यजे। विश्वे- सर्वे। कामिनः- त्वामिच्छन्तः। जुषन्त- सेवन्ते ॥८॥

त्वं होता मनुर्हितो वह्निरासा विदुष्टरः। अग्ने यक्षि दिवो विशः॥ ६.०१६.०९

अग्ने। विदुष्टरः- ज्ञानी। त्वम्। होता- देवानामाह्वाता। मनुः- अवबोधकः। मनु अवबोधने। हितः। वह्निः- वोढा। आसा- ज्वालया। दिवो विशः- देवान्। यक्षि- यज ॥९॥

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि॥ ६.०१६.१०

अग्ने। हव्यदातये- हव्यदानाय। गृणानः- स्तुतः सन्। वीतये- अनुभूतये। आ याहि- आगच्छ। होता- देवाह्वाता सन्। बर्हिषि- दर्भासने चित्ताकाशे वा। नि- नितराम्। सत्सि- उपविश ॥१०॥

तं त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य॥ ६.०१६.११

तम्- अमुम्। त्वा- त्वाम्। समिद्भिः। अङ्गिरः- अङ्गनशील। घृतेन- पूतनवनीतोपलक्षितावगमनेन। वर्धयामसि- वर्धयामः। यविष्ठ्य- युवतम। बृहत्- अत्यन्तम्। शोच- दीप्यस्व ॥११॥

स नः पृथु श्रवाय्यमच्छा देव विवाससि। बृहदग्ने सुवीर्यम्॥ ६.०१६.१२

देव। सः- असौ त्वम्। नः- अस्मान्। पृथु- विस्तीर्णम्। श्रवाय्यम्- श्रुतिप्रसिद्धम्। बृहत्- महत्। सुवीर्यम्। अच्छ- अभिलक्ष्य। विवाससि- अभिगमय ॥१२॥

त्वामग्ने पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत। मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः॥ ६.०१६.१३

अग्ने। त्वाम्। अथर्वा- चित्तवृत्तिनिरोधकः। थर्वतिश्चरतिकर्मा तत्प्रतिषेध इति यास्कः। पुष्करात्- हृदयपुण्डरीकात्। निरमन्थत- निर्ममन्थ। विश्वस्य- जगतः। वाघतः- वाहकात्। मूर्ध्नः- शिरःस्थानात्। महत्तत्त्वाद्धिरण्यगर्भात् निरमन्थत ॥१३॥

तमु त्वा दध्यङ्ङृषिः पुत्र ईधे अथर्वणः। वृत्रहणं पुरंदरम्॥ ६.०१६.१४

तम्। त्वा- त्वाम्। दध्यङ्- धारणावान्। अथर्वणः पुत्रः- योगिनः सन्ततिभूतः। ऋषिः- सूक्ष्मदर्शी। वृत्रहणम्- आवरणनाशकम्। पुरन्दरम्- बन्धनाशकम्। ईदे- उद्दीपितवान् ॥१४॥

तमु त्वा पाथ्यो वृषा समीधे दस्युहन्तमम्। धनंजयं रणेरणे॥ ६.०१६.१५

तम्। त्वा- त्वाम्। रणेरणे- वृत्रैर्जनितेषु सर्वेषु युद्धेषु। दस्युहन्तमम्- अतिशयेन स्तेनबाधकम्। धनञ्जयम्- सम्पज्जेतारम्। पाथ्यः- सुमार्गस्थः। वृषा- वर्षको दाता। समीधे- सम्यगुद्दीपितवान् ॥१५॥

एह्यू षु ब्रवाणि तेऽग्न इत्थेतरा गिरः। एभिर्वर्धास इन्दुभिः॥ ६.०१६.१६

एहि- आगच्छ। अग्ने। ते- तुभ्यम्। इत्था- इमान्। इतरा गिरः- अन्यान् मन्त्रानपि। सु- सुष्ठु। ब्रवाणि- वदानि। एभिः- एतैः। इन्दुभिः- हृदयक्लेदनशीलैर्मन्त्रैः। वर्धासे- वर्धसे ॥१६॥

यत्र क्व च ते मनो दक्षं दधस उत्तरम्। तत्रा सदः कृणवसे॥ ६.०१६.१७

यत्र। क्व च- कस्मिंश्चिद्देशे। ते- तव। मनः- चित्तम्। दक्षम्- सामर्थ्यम्। उत्तरम्- श्रेष्ठम्। दधसे- धारयसि। तत्र। सदः- स्थानम्। कृणवसे- करोषि ॥१७॥

नहि ते पूर्तमक्षिपद्भुवन्नेमानां वसो। अथा दुवो वनवसे॥ ६.०१६.१८

ते- तव। पूर्तं- पूरकं तेजः। नहि। अक्षिपत्- क्षेपकम्। भुवत्- भवति। नेमानाम्- अल्पानामपि। वसो- शरण्यभूत। अथ। दुवः- सेवाः। वनवसे- सम्भजस्व ॥१८॥

आग्निरगामि भारतो वृत्रहा पुरुचेतनः। दिवोदासस्य सत्पतिः॥ ६.०१६.१९

भारतः- निर्वाहकः। वृत्रहा- आवरणबाधकः। पुरुचेतनः- बहूनां प्रज्ञावान्। दिवोदासस्य- देवानां सेवकस्य। सत्पतिः- सत्तापालकः। अग्निः। आ अगामि- आश्रितोऽभूत् ॥१९॥

स हि विश्वाति पार्थिवा रयिं दाशन्महित्वना। वन्वन्नवातो अस्तृतः॥ ६.०१६.२०

अस्तृतः- अहिंस्यः। अवातः- अप्रतिगतः। वन्वन्- वृत्राणि हिंसन्। सः- असौ। हि- खलु। विश्वा पार्थिवान्- सर्वाणि भौमानि तरन्। रयिम्- दानयोग्यसम्पदम्। महित्वना- स्वमाहात्म्येन। दाशत्- यच्छति ॥२०॥

स प्रत्नवन्नवीयसाग्ने द्युम्नेन संयता। बृहत्ततन्थ भानुना॥ ६.०१६.२१

अग्ने। सः- असौ त्वम्। प्रत्नवत्- पुराणेन। नवीयसा- अभिनवेन। बृहत्- महता। द्युम्नेन भानुना- प्रकाशेन। संयता- संयमेन। ततन्थ- विस्तारयसि ॥२१॥

प्र वः सखायो अग्नये स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया। अर्च गाय च वेधसे॥ ६.०१६.२२

सखायः- सुहृदः। धृष्णुया- शत्रुधर्षकाय। वेधसे- विधायकाय मेधाविने। वः- युष्मदीयाय। अग्नये। स्तोमम्- साम। गाय- कीर्तय। यज्ञम्- पूजाम्। अर्च- समर्पय। च ॥२२॥

स हि यो मानुषा युगा सीदद्धोता कविक्रतुः। दूतश्च हव्यवाहनः॥ ६.०१६.२३

सः- असौ। हि- खलु। मानुषा युगा- मनुष्ययुगेषु। होता- देवानामाह्वाता। कविक्रतुः- सूक्ष्मदर्शिनां सङ्कल्पभूतः। दूतः- देवमनुष्याणामन्तराळे दूतः। च। हव्यवाहनः- चरुपुरोडाशध्यानभावनादिहव्यवाहकः। सीदत्- उपविशति ॥२३॥

ता राजाना शुचिव्रतादित्यान्मारुतं गणम्। वसो यक्षीह रोदसी॥ ६.०१६.२४

वसो- शरण्य। ता- तौ। राजाना- राजन्तावश्विनौ प्राणेशनशक्तिभूतौ। शुचिव्रता- परिशुद्धधर्मौ। आदित्यान्- अखण्डप्रकृतिजान् देवान्। मारुतं गणम्- वातान् प्राणविशेषान्। रोदसी- द्यावापृथिव्यौ। इह- अत्र। यक्षि- पूजय ॥२४॥

वस्वी ते अग्ने संदृष्टिरिषयते मर्त्याय। ऊर्जो नपादमृतस्य॥ ६.०१६.२५

अमृतस्य ऊर्जो नपात्- अमृतशक्तिज। अग्ने। ते- तव। वस्वी- चित्तवृत्तिस्तम्भकारकम्। वसु स्तम्भे। संदृष्टिः- सन्दर्शनम्। मर्त्याय- मनुष्याय। इषयते- काम्यते ॥२५॥

क्रत्वा दा अस्तु श्रेष्ठोऽद्य त्वा वन्वन्सुरेक्णाः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्॥ ६.०१६.२६

क्रत्वा- प्रज्ञया। दाः- दाता। अस्तु- भवतु। श्रेष्ठः- उत्तमः। अद्य- इदानीम्। त्वा- त्वाम्। सुरेक्णाः- शोभनहविष्कः। वन्वन्- सम्भजन्। मर्तः- मर्त्यः। सुवृक्तिम्- शोभनस्तुतिम्। आनश- व्याप्नोतु ॥२६॥

ते ते अग्ने त्वोता इषयन्तो विश्वमायुः। तरन्तो अर्यो अरातीर्वन्वन्तो अर्यो अरातीः॥ ६.०१६.२७

अर्यः- अरीन्। अरातीः- अदातॄन्। वन्वन्तः- हिंसन्तः। तरन्तः। ते- तुभ्यम्। अग्ने। त्वोताः- त्वद्रक्षिताः। विश्वम्- सर्वम्। आयुः- अन्नम्। इषयन्तः- कामयन्तो लभन्ते ॥२७॥

अग्निस्तिग्मेन शोचिषा यासद्विश्वं न्यत्रिणम्। अग्निर्नो वनते रयिम्॥ ६.०१६.२८

अग्निः। तिग्मेन- तीक्ष्णया। शोचिषा- ज्वालया। विश्वम्- सर्वम्। अत्रिणम्- अदनशीलं सुखादिदुःखनिधनम्। नि यासत्- निहन्तु। अग्निः। नः- अस्मभ्यम्। रयिम्- दानयोग्यसम्पदम्। वनते- सम्भजते ॥२८॥

सुवीरं रयिमा भर जातवेदो विचर्षणे। जहि रक्षांसि सुक्रतो॥ ६.०१६.२९

जातवेद- जातविद्य। विचर्षणे- विशेषदर्शिन्। सुवीरम्- शोभनवीर्यसम्पन्नाम्। रयिम्- दानयोग्यसम्पदम्। आ भर- आहर। सुक्रतो- शोभनसङ्कल्पभूत। रक्षांसि- स्वार्थैकपरान्। जहि- बाधस्व ॥२९॥

त्वं नः पाह्यंहसो जातवेदो अघायतः। रक्षा णो ब्रह्मणस्कवे॥ ६.०१६.३०

जातवेदः- जातविद्य। ब्रह्मणस्कवे- मन्त्रदर्शिन् मेधादर्शिन्। त्वम्। नः- अस्मान्। अघायतः- पापिनः। अंहसः- पापात्। पाहि- पालय। नः- अस्मान्। रक्ष ॥३०॥

यो नो अग्ने दुरेव आ मर्तो वधाय दाशति। तस्मान्नः पाह्यंहसः॥ ६.०१६.३१

अग्ने। यः। दुरेवः- दुष्टः। मर्तः- मर्त्यः। नः- अस्मान्। वधाय- हिंसायै। दाशति- यच्छति। तस्मात्। नः- अस्मान्। अंहसः- पापिनः। पाहि- रक्ष ॥३१॥

त्वं तं देव जिह्वया परि बाधस्व दुष्कृतम्। मर्तो यो नो जिघांसति॥ ६.०१६.३२

यः। मर्तः- मर्त्यः। नः- अस्मान्। जिघांसति- हन्तुमिच्छति। तम्। त्वम्। देव- द्योतनशील। दुष्कृतम्- पापिनम्। जिह्वया- ज्वालया। परि बाधस्व- नाशय ॥३२॥

भरद्वाजाय सप्रथः शर्म यच्छ सहन्त्य। अग्ने वरेण्यं वसु॥ ६.०१६.३३

सहन्त्य- शक्तिज। अग्ने। भरद्वाजाय- हव्यधारकाय। सप्रथः- प्रथितम्। शर्म- क्षेमम्। यच्छ- देहि। वरेण्यम्- श्रेष्ठम्। वसु- धनं यच्छ ॥३३॥

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनद्द्रविणस्युर्विपन्यया। समिद्धः शुक्र आहुतः॥ ६.०१६.३४

द्रविणस्युः- सम्पत्कामः। विपन्यया- स्तुत्या। समिद्धः- सम्यगुद्दीपितः। शुक्रः- शुभ्रः। आहुतः- समर्पितहव्यः। अग्निः। वृत्राणि- आवरणानि। जङ्घनत्- बाधितवान् ॥३४॥

गर्भे मातुः पितुष्पिता विदिद्युतानो अक्षरे। सीदन्नृतस्य योनिमा॥ ६.०१६.३५

मातुः- पृथिव्याः। अक्षरे- अक्षीणे। गर्भे। पितुः- दिवः। पिता- पालकः। विदिद्युतानः- ज्वलन्। ऋतस्य- प्रकृतिनियतिभूतसत्यस्य। योनिम्- सदने। सीदन्- उपविशन् राजते ॥३५॥

ब्रह्म प्रजावदा भर जातवेदो विचर्षणे। अग्ने यद्दीदयद्दिवि॥ ६.०१६.३६

जातवेदः- जातविद्य। विचर्षणे- विशेषदर्शिन्। अग्ने। यत्। दिवि। दीदयत्- दीप्यते। तत्। प्रजावत्- धर्मसन्ततियुक्तम्। ब्रह्म। आ भर- आहर ॥३६॥

उप त्वा रण्वसंदृशं प्रयस्वन्तः सहस्कृत। अग्ने ससृज्महे गिरः॥ ६.०१६.३७

सहस्कृत- सहनशील। अग्ने। प्रयस्वन्तः- हव्यवन्तो वयम्। रण्वसंदृशम्- रमणीयसन्दर्शनम्। त्वा- त्वां प्रति। गिरः- मन्त्रान्। उप ससृज्महे- सृजामः ॥३७॥

उप च्छायामिव घृणेरगन्म शर्म ते वयम्। अग्ने हिरण्यसंदृशः॥ ६.०१६.३८

अग्ने- पावक सत्क्रतो। हिरण्यसंदृशः घृणेः- भासमानस्य। ते- तव। शर्म- आश्रयम्। वयम्। उपच्छायामिव- घर्मार्ताश्छायामिव। अगन्म- प्रपन्नाः ॥३८॥

य उग्र इव शर्यहा तिग्मशृङ्गो न वंसगः। अग्ने पुरो रुरोजिथ॥ ६.०१६.३९

यः। शर्यहा- बाणैर्हन्ता। उग्र इव- योद्धेव। तिग्मशृङ्गः- तीक्ष्णशृङ्गः। वंसगः- वृषभः। न- इव। अग्ने। पुरः- प्रत्यक्षतः। रोरोजिथ- बन्धनानां भग्नं कृतवान् ॥३९॥

आ यं हस्ते न खादिनं शिशुं जातं न बिभ्रति। विशामग्निं स्वध्वरम्॥ ६.०१६.४०

यम्। न- सम्प्रति। खादिनम्- हव्यभक्षकम्। जातम्- अभिनवम्। शिशुम्- वत्सम्। विशाम्- प्रजानाम्। स्वध्वरम्- ध्वरविरोधिकर्माणम्। अग्निम्। हस्ते- भुजे। न- इव। बिभ्रति- धारयति ॥४०॥

प्र देवं देववीतये भरता वसुवित्तमम्। आ स्वे योनौ नि षीदतु॥ ६.०१६.४१

देववीतये- दिव्यानुभूतये। वसुवित्तमम्- अतिशयेन सम्पल्लम्भकम्। देवम्- द्योतनशीलमग्निम्। प्र- प्रकर्षेण। भरत- धारयत। स्वे- स्वकीये। योनौ- सद्मनि। आ निषीदतु- उपविशतु ॥४१॥

आ जातं जातवेदसि प्रियं शिशीतातिथिम्। स्योन आ गृहपतिम्॥ ६.०१६.४२

जातम्- उद्भूतम्। प्रियम्। अतिथिम्। गृहपतिम्- कुटुम्बपालकम्। अग्निम्। जातवेदसि- जातप्रज्ञे। स्योने- आनन्दे। आ शिशीत- तीक्ष्णीकुरुत ॥४२॥

अग्ने युक्ष्वा हि ये तवाश्वासो देव साधवः। अरं वहन्ति मन्यवे॥ ६.०१६.४३

देव अग्ने। ये। तव- ते। साधवः। अश्वासः- प्राणतुरगाः। तान्। युक्ष्व- योजय। मन्यवे- अस्मन्मननाय। अरम्- पर्याप्तम्। वहन्ति ते ॥४३॥

अच्छा नो याह्या वहाभि प्रयांसि वीतये। आ देवान्सोमपीतये॥ ६.०१६.४४

नः- अस्मान्। अच्छ- अभिलक्ष्य। याहि- आगच्छ। वीतये- अनुभूतये। प्रयांसि- हव्यानि। अभि- आभिमुख्येन। आ वह। सोमपीतये- रसानुभूतये। देवान् आवह ॥४४॥

उदग्ने भारत द्युमदजस्रेण दविद्युतत्। शोचा वि भाह्यजर॥ ६.०१६.४५

भारत- भरणशील। अग्ने। अजस्रेण- अविच्छिन्नेन तेजसा। उत् शोच- उद्दीप्यस्व। अजर- जरारहित। दविद्युतत्- दीप्यमानस्त्वम्। द्युमत्- दीप्तिमता तेजसा। वि भाहि- उद्दीप्यस्व ॥४५॥

वीती यो देवं मर्तो दुवस्येदग्निमीळीताध्वरे हविष्मान्।
होतारं सत्ययजं रोदस्योरुत्तानहस्तो नमसा विवासेत्॥ ६.०१६.४६

वीती- हव्येन। होतारम्- देवाह्वातारम्। रोदस्योः- द्यावापृथिव्योः। सत्ययजम्- अवितथपूजकम्। देवम्- द्योतमानम्। अग्निम्। अध्वरे- यज्ञे। हविष्मान्- हव्ययुक्तः। मर्तः- मर्त्यः। दुवस्येत्- परिचरेत्। ईळीत- स्तुवीत। उत्तानहस्तः- उत्थितपाणिः शिरस्यञ्जलिमाधाय। नमसा- वन्दनेन। विवासेत्- परिचरेत ॥४६॥

आ ते॑ अग्न ऋ॒चा ह॒विर्हृ॒दा त॒ष्टं भ॑रामसि। ते ते॑ भवन्तू॒क्षण॑ ऋष॒भासो॑ व॒शा उ॒त॥ ६.०१६.४७

अग्ने। ते- त्वदर्थम्। च- मन्त्रेण। ऋचा- मन्त्रेण। हृदा- हृदयेन। तष्टम्- निर्मितम्। हविः- भावनामयं हव्यम्। भरामसि- धारयामः। ते- त्वदर्थम्। ते- तानि। उक्षणः- सेचकानि। ऋषभासः- श्रेष्ठानि। उत- अपि च। वशाः- कान्तानि। भवन्तु- सन्तु ॥४७॥

अ॒ग्निं दे॒वासो॑ अग्रि॒यमि॒न्धते॑ वृत्र॒हन्त॑मम्। येना॒ वसू॒न्याभृ॑ता तृ॒ळ्हा रक्षां॑सि वा॒जिना॑॥ ६.०१६.४८

येन। वाजिना- बलवता। वसूनि- सम्पदः। आभृता- आहृताः। रक्षांसि- स्वार्थैकपराणि। तृळ्हा- हिंसितानि। तम्। अग्रियम्- प्रथमम्। वृत्रहन्तमम्- अतिशयेन आवरणबाधकम्। अग्निम्। देवासः- देवाः। इन्धते- उद्दीपयन्ति ॥४८॥